वेद क्लिष्ट क्यों हैं ?

वेदों के सम्बन्ध में यदि कोई एक बात शत प्रति शत रूप से सत्य है तो वह यही है कि वेद जरूरत से ज्यादा क्लिष्ट दुरूह, दुष्कर, असहज और मुश्किल से समझ में आने वाले सद्ग्रंथ हैं। एक लेखक तो यहाँ तक लिखता है कि'' ..... चारो वेद एक पूर्ण तथा वैज्ञानिक -ग्रंथ हैं तथा महाभारत-काल के उपरांत कोई भी भाष्यकार साधनों के अभाव के कारण वेदों की रचना-शैली तक को नहीं समझ पाया है। वेद-विद्याओं को इतना अधिक जटिलतम और गूढ़तम बनाने का कारण ''छन्दोग्य उपनिषद्'' १/२/१-१४ तक में दिया है कि तामसी-वृत्तियों से बचाने के लिये पहले वेद-विद्याओं को छन्दों से ढँका, लेकिन फिर भी वेद-विद्यायें द्रष्टव्य रहीं। इसके उपरांत वेद-विद्याओं को औंकार अक्षरों से ढँक दिया गया है इसलिये वेद-विद्यायें इतनी जटिलतर बन चुकी हैं ....।'' (देखिये: ''वेदों में विज्ञान'' पृष्ठ ३३-३४) अब प्रश्न यह उठता है कि वेदों को क्या जानबूझकर इतना जटिल बना दिया गया है कि जिसे इस कलियुग में केवल महर्षि दयानन्द सरस्वती या एक दो इने गिने विद्वान ही समझ पायें या वेदों की निर्माण-भूमि ही इतनी दुर्बाध, दुष्तर एवँ दुरूह है कि वेद किसी की भी समझ में नहीं आते हैं। कोई वेदों में छायावादी-कविता देखता है तो कोई ज्योतिष, कोई वेदों में नक्षत्र-विद्या देखता है तो कोई वेदों में इतिहास देखता है, पर वेदों में तत्वत: क्या है ? इसे प्रमाण के रूप में आजतक कोई नहीं देख पाया है।

इस जटिलता के, जहाँ तक मैं सोचता हूँ, अनेक कारण हैं जैसे वेदभाषा (जो कि संस्कृत नहीं है) से अपरिचित रहना उसे दैत्यों-दानवों-राक्षसों व अन्य तामसिक-वृत्तिवालों से बचाना, पर सबसे बड़ा कारण है उसे ब्राह्मणों द्वारा अपनी पैतृक-सम्पत्ति बनानें के लोभ में 'गोप्यम् गोप्यम् परमगोप्यम्' बना डालना लगता है। ब्राह्मण वेदों में 'ब्रह्म-विद्या' देखता है और केवल स्वयँ को ही उसका रसास्वादन करने का अधिकारी मानता है इसलिये उसने वेद जैसी प्रभु-प्रदत्त विद्या के महाविद्यालय में अपने अहमं का ताला मारा हुआ है ताकि जन-साधारण से वेद दूर रहें और वही उनके एकमात्र मालिक बने रहें। यदि यह बात न होती तो ब्राह्मण वेदों के भाष्यों को 'ब्राह्मण-ग्रंथ' न कहते और न आदि शंकराचार्य के शब्दों में यह कहते कि वेद शूद्रों आरै स्त्रियों के लिये नहीं हैं।

मैंने तो ऐसे ब्राह्मण भी देखे हैं जो अपने को ही 'ब्रह्म' कहते हैं और वेदों पर एकाधिकारी जमाये हुए दिखते हैं। जबकि सच यह है कि 'ब्रह्म' शब्द ब्राह्मण का नहीं परम -सत्ता (परमेश्वर) का वाचक है। और परमेश्वर का द्वार सबके लिये खुला है चाहे वह ब्राह्मण हो, छत्रिय हो, वैश्य हो या शूद्र हो, और यदि ऐसा नहीं है तो मैं उसे परमेश्वर ही मानने को तैय्यार नहीं हूँ जिसका द्वार केवल ब्राह्मण के लिये ही खुला है और सबके लिये बन्द है।

वेदों का पूरा पूरा ज्ञान केवल उन अलौकिक -शक्ति प्राप्त उन महापुरूषों को था जो सदाचारी नैतिक, अध्यात्मिक और योगी

थे। सतयुग में ऐसे ही विद्वान सनकादि महर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्रादि थे, यही त्रेता में थे। द्वापर में यह ज्ञान गर्ग मुनि को था और कलियुग में वेदों के ज्ञाता केवल दयानंद सरस्वती ही थे। इनके अतिरिक्त जिन जिन ऋषि मुनियों के मंत्र वेदों में उपलब्ध हैं वह वेदों के अधिकारी विद्वान थे। आज भारतीय-विद्वानों का वेद से दूर दूर रहना हम सभी का दुर्भाग्य है। आज के वेद-विद्वान, महात्मा और अलौकिक-शक्ति प्राप्त प्रतिभा पुरूष तक वेदों का ज्ञान देने में असमर्थ हैं, कदाचित इसलिये भारतीय-शिक्षा-प्रणाली में वेद सम्मिलित नहीं हो पाये हैं। यह भारत का दुर्भाग्य है। महर्षि दयानंद ने ऐसे घोर अंधकार के युग में आज से ११५ वर्ष पहले ही वेदों की अलौकिकता पहचानकर उसके जो सर्वप्रिय एवँ सर्वग्राह्य भाष्य उत्पन्न किये हैं और आर्यों के जो नियम बनाये हैं, वह आधुनिक भारत के लिये प्रकाश-पुँज हैं। यदि आज इसी आधार पर वेदों का अध्ययन - अध्यापन किया गया होता तो आज संसार महर्षि दयानंद की लोकोत्तर-प्रतिभा के आगे नतमस्तक होता। वेदों की इतनी सूक्ष्मता और दिव्यता के कारण ही उन्होंने वेदों को साक्षात ईश्वरकृत अर्थात 'अपौरूषेय' कहा था।

वेदों को लोक-व्यवहार से अलग करने का काम ब्राह्मणों ने किया है, उन्होंने जनता से वेदों को पृथक करके तरह तरह की भ्रांतियाँ फैलाकर गुमराह किया है। मैं केवल एक उदाहरण देकर अपने पक्ष का प्रमाण प्रस्तुत करता हूँ, और वह प्रमाण यह है कि ब्राह्मणों ने यह झूठा प्रचार किया है कि चतुर्वेदि वे हैं जिन्हें चारे वेदों का ज्ञान है, त्रिवेदी वे हैं जिन्हें तीन वेदों का ज्ञान है, द्विवेदी वे हैं जिन्हें दो वेदों का ज्ञान हैं और एक वेद का ज्ञान होना हर ब्राह्मण का साधारण-काम है जबकि सच्चाई यह है कि प्राचीन युग में यज्ञ के पास वेदियाँ बनती थीं इसलिये जो ब्राह्मण चार वेदियाँ बनाता था वह चतुर्वेदि कहलाता था, जो ब्राह्मण तीन वेदियाँ बनाता था, वह ब्राह्मण त्रिवेदी कहलाता था, जो ब्राह्मण दो वेदियाँ बनाता था, वह ब्राह्मण द्विवेदी कहलाता था और एक वेदी तो कोई भी ब्राह्मण बना सकता था, जो कि बहुत ही साधारण काम था। बहुत कम लोग जानते हैं कि उस युग में 'मंत्र' को 'ब्रह्म' कहते थे और वेद को श्रुति। वेद का प्रयोजन यज्ञ था आरै वेदों के बिना यज्ञ नहीं हो सकते थे।

वेद क्लिष्ट हैं, इसका कारण ब्राह्मण-लोग भगवान मत्स्य को देते हैं। वे कहते हैं कि मत्स्यपुराणा में सृष्टि के आरम्भ में वेद जन्मे थे, प्रमाण देखिये

''तपश्चचार प्रथमं अमराणां पितामहः।
आविर्भूतास्ततो वेदाः सांगोपाङ्गपदक्रमाः॥
अनन्तरश्चवक्त्रेभ्यो वेदास्तत्र विनिःसृताः॥''

मात्स्ये, अ.३ श्लोक २-४

अर्थात् -ब्रह्मा के (चारो) मुखों से (चारो) वेद निकले।

जब ब्राह्मणों ने ऐसे ऐसे वचन पुराणों में भर दिये हैं तब वेदों की क्लिष्टता का दोष कोई ब्राह्मणों को कैसे दे सकता है ? क्यौंकि वेद भगवान मत्स्य के वचन हैं।

''शेख साहब औरतों की तरफ थूकते भी नहीं।
लेकिन रातों में शेख साहब चूकते भी नहीं॥''

मेरा यह कोरा मज़ाक ही नहीं है, शास्त्रीय दृष्टि से भी देखा जाय तो वेदों को इतना कठिन ब्राह्मणों ने ही बनाया है; जिसका पर्दाफाश कर रहे हैं ''हिन्दुत्व'' जैसी महान पुस्तक के महान लेखक श्री रामदास गौड लिखते हैं -'' ..... अरबों बरस की परम्परा से लेकर सात आठ हजार बरस की परम्परा तक वेदों के मंत्रों के सुने या देखे जाने अथवा रचे जाने का बहुतों को अनुमान है। यह परम्परा कितनी विस्तीर्ण है इसका अनुमान करना कठिण है। जिन लिखी पोथियों की नकल होती आई, है अथवा छापे में जिनके संस्कार एक एक की जगह कई कई हैं, उनमें दो चार सौ बरस में ही लेख-प्रमाद से, छापे खाने के प्रेत-प्रमाद से, पाठकों आरै पठकों के मतभेद से, कितने कितने परिवर्तन हो गये हैं। अभी कल की ही चीज तुलसीदास जी के रामचरितमानस के ही असंख्य पाठान्तर और विविध प्रामाणिक बनने वाले संस्कार देखे जा सकते हैं तो वेदों के पाठान्तरों और संस्करणों की क्या गिनती की जा सकती है ? जो गुरूमुख से सुनकर स्मरण कर लेने पर निर्भर थे, जिनके लिये कई लाख नहीं तो निर्विवाद ही कई हजार बरसों के अन्तर अवश्य पड़ते गये, जिनकी भाषा का समझना काल पाकर इतना कठिन हो गया कि मंत्रों के साथ उनके पदपाठ के अक्षर अक्षर सीधे उलटे सब तरह से रटकर सुरक्षित रखने की परम्परा बन गयी। मंत्रों की टिप्पणी रूप ब्राह्मणमाग आरै आरण्यकों तक की भाषा दुरूह हो गयी, निरूक्तियों की रचनायें हुई, व्याकरण ने बाल की खाल खींचने वाले सामर्थ्य के होते भी अपने को लाचार पाया। उनकी व्याख्या करने को 'स्मृति' की परम्परा की सहायता ली जाने लगी। मीमांसकों ने बड़े जोर लगाये। जैमिनि ने कर्मकाण्ड का, जो बहुत काल बीतने से लुप्त सा हो रहा था, पुनरूद्धार करना चाहा। ज्ञान, विज्ञान, उपासना, सृष्टि की कथा, वंश, मन्वन्तरादि के साथ पुराणों ने भी वेदों की ही व्याख्या की चेष्टा की।''

देखिये : पृष्ठ २१-२२, प्रथम संस्करण,

वेद इसलिये आज हमें इतने क्लिष्ट जान पड़ते हैं, जिसका हमारे पास अब कोई उपचार नहीं हैं।

॥ इति ॥

- रसिक बिहारी मंजुल
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-११०००७